|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 11: विश्वरूपदर्शनयोग

2/4 (श्लोक 12-27), शनिवार, 25 जनवरी 2025

विवेचक: गीता विदूषी सौ वंदना जी वर्णेकर

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/3vpMdV5ULN4

विश्वरूप दर्शन द्वारा प्राप्त कर्त्तव्य बोध

पारम्परिक विधि अनुसार मङ्गलाचरण, देश प्रेम गान, शिरोमणि भक्त हनुमानजी की स्तुति हनुमान चालीसा पाठ एवं दीप प्रज्वलन के साथ आज के विवेचन सत्र का शुभारम्भ हुआ।

परम पूज्य गुरुदेव का आज प्राकट्य दिवस है। आज का दिन विशेष है क्योंकि उन्नीस वर्ष में ऐसा संयोग बनता है जब तिथि, षट्तिला एकादशी और अङ्ग्रेजी दिनाङ्क, पच्चीस जनवरी एक साथ आये। ऐसे शुभ अवसर पर यह हम सबका सद्भाग्य है कि श्रीमद्भगवद्गीता का दिव्यदृष्टि प्रदान कराने वाला, मनुष्य के जीवन का दृष्टिकोण बदलने, भय दूर करने और सभी को समाहित करने का सामर्थ्य प्रदान कराने वाले इस सुन्दर आद्य ज्ञान का अमृतपान हम कर रहे हैं। गुरुदेव के अभीष्ट का चिन्तन करते हुए आज का विवेचन उन्हीं के चरणों में समर्पित। माँ सरस्वती की वन्दना, महामुनि वेदव्यास जी की कृपा दृष्टि प्राप्त करते हुए, ज्ञानेश्वरजी महाराज की कृपा छत्र में रहते हुए और उनको कोटि-कोटि नत मस्तक करते हुए ग्यारहवें अध्याय का विवेचन प्रारम्भ हुआ।

हमारे जीवन में गुरु कृपा का अत्यन्त महत्त्व होता है। गुरु के प्रति अपार भक्ति और सेवा भावना की पराकाष्ठा थे ज्ञानेश्वर जी महाराज। उनके ज्येष्ठ भ्राता निवृत्ति नाथ, उनके सद्गुरु थे। ज्ञानेश्वरी रुपी श्रीमद्भगवद्गीता पर विवेचन करते हुए उनके गुरु उनके समीप ही थे। अपने सद्गुरु का अनुनय करते हुए ज्ञानेश्वर जी महाराज कहते हैं -

म्हणौनि साधकां तूं माउली ।
पिके सारस्वत तुझिया पाउलीं ।
या कारणें मी साउली ।
न संडीं तुझी ॥ ८ ||

माँ ही बालक की पहली गुरु होती है और ज्ञानेश्वर जी महाराज अपने गुरु को अपनी अपार श्रद्धा भेंट करते हुए उन्हें अपनी माँ तुल्य समझते हैं। गुरु शिष्य का रिश्ता बड़ा ही अनूठा होता है। शिष्य जब अपने गुरु के चरणों में पूर्णतः समर्पित हो जाये तो वह जीवन के गूढ़ रहस्य प्राप्त कर पाता है।

इस अद्वितीय सम्बन्ध की प्रशंसा एवम् स्तुति में यह प्रार्थना नित्य अर्पण की जाती है कि यह रिश्ता सदैव विद्यमान रहे और कभी

खण्डित न हो।

कोई शिष्य गुरु चरणों में जब शीश झुकाता है,
परमात्मा खुद आकर आशीष लुटाता है।

अर्जुन भी अपने गुरु परब्रह्म परमात्मा के चरणों में समर्पित हो जाते हैं। दूसरे अध्याय के सातवें श्लोक में वे शिष्य बन श्रीभगवान् से अनुनय करते हैं -

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः ।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ॥2.7॥

शिष्य के दो अर्थ होते हैं और दो ही मूल प्रयोजन होते हैं।
प्रथम, संशयार्थ - संशयों का निराकरण, ज्ञान की प्राप्ति।
दूसरा, शासनार्थ - गुरु का आज्ञाकारी।

जब शिष्य का उन्नयन होता है तो ज्ञान का मार्ग प्रशस्त होता है। सृष्टि के व्यवहारिक प्रसङ्गों के कारण जब हमारा अन्तःकरण व्यथित होता है, हम हतोत्साहित हो जाते हैं, मन-मस्तिष्क में कोलाहल मच जाता है, उसके निराकरण हेतु दसवें अध्याय में श्रीभगवान् ने विभूतियों का वर्णन किया। कण-कण में यदि हम ईश्वर के स्वरूप का दर्शन न कर पायें तो प्रभु ने स्वयं ऐसे प्रमुख स्थानों अथवा जीवों की सूची प्रदान की है जिससे हम उनकी अनुभूति कर पायें। इसी कारण हमारी वैदिक परम्पराओं में प्रकृति के सान्निध्य में करने वाली क्रियाओं पर विशेष प्रकाश डाला गया। जैसे पवित्र गङ्गा नदी में स्नान का विशेष महत्त्व है। व्रत विधि में तुलसी पत्र, बेल पत्र चढ़ाने का विधान है। हिमालय, गरुड़, मयूर के गुण भी विशेष विभूतियाँ हैं। प्रकृति का आलिङ्गन कर मन शान्त हो जाता है। मन उस अनन्त परमात्मा के साथ एकाकार होने लगता है।

अर्जुन की लालसा अब बढ़ने लगती है, वे प्रभु का दर्शन चहुँ ओर करना चाहते हैं। अतः वे श्रीभगवान् से अनुनय-विनय करते हैं कि उन्हें दिव्य दृष्टि प्राप्त हो ताकि वे उनके विश्वरूप का दर्शन कर पाएँ।

दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगमैश्वरम् ॥11.8॥

इस अध्याय को **विश्रान्ति अध्याय** भी कहा गया है क्योंकि यहाँ श्रीभगवान् ने स्पष्ट उपदेश नहीं दिया, अतः इस अध्याय का गहनता से चिन्तन-मनन करना आवश्यक है। ज्ञानेश्वर जी महाराज ने इसे प्रयागराज की उपमा दी है। कैसा विलक्षण संयोग है कि महाकुम्भ के पर्व के समय में इस अध्याय के त्रिवेणी सङ्गम में डूब कर हम सब इसका चिन्तन कर रहे हैं।

11.12

दिवि सूर्यसहस्रस्य, भवेद्युगपदुत्थिता।
यदि भाः(स्) सदृशी सा स्याद्, भासस्तस्य महात्मनः॥11.12॥

(अगर) आकाश में एक साथ हजारों सूर्योंका उदय हो जाय, (तो भी) उन सबका प्रकाश (मिलकर) उस महात्मा (विराट् रूप परमात्मा) के प्रकाशके समान शायद ही हो अर्थात् नहीं हो सकता।

विवेचन - सञ्जय को अपने गुरु भगवान वेदव्यास जी द्वारा दिव्य दृष्टि प्राप्त है और वे राजकक्ष से ही समराङ्गण का दृश्य देख पा रहे हैं। श्रीमद्भगवद्गीता में गुरु-शिष्य की दो जोड़ियाँ हैं-

प्रथम नारायण और नरोत्तम, अर्थात् स्वयं श्रीभगवान् और अर्जुन। दूसरी भगवान वेदव्यासजी और सञ्जय।

ज्ञानेश्वरी के समन्वय से तीसरी जोड़ी जुड़ जाती है, ज्ञानेश्वर माउली और उनके सद्गुरु निवृत्ति नाथ।

गुरु शिष्य के परस्पर सम्बन्ध का अत्यन्त मनोहारी दर्शन ज्ञानेश्वरी में पाया गया है। इसी के सन्दर्भ में श्रीभगवान् और अर्जुन के अद्वितीय सम्बन्ध पर प्रकाश डाला गया है।

दिवि सूर्यसहस्रस्य - आकाश में यदि हज़ारों सूर्यों का उदय हो जाए ज्ञानेश्वर जी महाराज इसका व्याख्यान करते हुए कहते हैं कि ऐसी उपमा भी पूर्ण नहीं आंशिक है क्योंकि सहस्र सूर्यों के तेज का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। सञ्जय परमात्मा के विराट विश्वरूप के प्रकाश की तुलना हज़ारों सूर्यों के एक साथ उदित हो जाने से करते हैं।

एटम बम के आविष्कारक ओपेनहाइमर ने जब उसका विस्फोट देखा तब इसी श्लोक का स्मरण किया। उस विस्फोट का प्रकाश हज़ारों सूर्यों के तेज के समान था।

11.13

तत्रैकस्थं(ञ्) जगत्कृत्स्नं(म्), प्रविभक्तमनेकधा।
अपश्यद्देवदेवस्य, शरीरे पाण्डवस्तदा॥11.13॥

उस समय अर्जुनने देवोंके देव भगवान्के उस शरीर में एक जगह स्थित अनेक प्रकारके विभागोंमें विभक्त सम्पूर्ण जगत् को देखा।

विवेचन- विश्वरूप का विवरण करते हुए सञ्जय कहते हैं कि श्रीभगवान् के विराट शरीर में इस जगत के विविध दृश्य एक साथ अर्जुन को दिखते हैं।

ज्ञानेश्वर जी महाराज इसका वर्णन इस प्रकार करते हैं-

जिस सागर के बुलबुले ही ब्रह्माण्ड हो, वह सागर कितना विशाल होगा!

ऐसे विराट, भव्य एवं दिव्य विश्वरूप का दर्शन अर्जुन को हो रहा है।

परम पूज्य स्वामीजी गोविन्ददेव गिरिजी महाराज कहते हैं कि सम्पूर्ण भक्ति के इतिहास में श्रीभगवान् ने ऐसा रूप किसी को नहीं दिखाया। श्रीभगवान् ने बाल्यकाल में माँ यशोदा के सामने एक क्षण के लिए मुख खोला था, वह उनका मनोहारी रूप था। हस्तिनापुर की सभा में जब दुर्योधन के समक्ष वे शान्ति प्रस्ताव लेकर गये और दुर्योधन उन्हें बन्दी बनाना चाहता था, तब श्रीभगवान् ने कुछ क्षणों के लिए विकराल भयावह रूप धारण किया। भक्तों के लिए प्रभु मनोहारी अवतार ग्रहण कर लेते हैं और दुष्टों के लिए भयावह, परन्तु ज्ञानियों को समझना आवश्यक है कि दोनों ही उनके रूप हैं। अर्जुन के लिए श्रीभगवान् अपने दोनों रूपों का दर्शन देते हैं, क्योंकि वे अर्जुन को भक्ति से ज्ञान की ओर ले जाना चाहते थे।

समग्र संसार किस प्रकार श्रीभगवान् में समाहित है! यह देख अर्जुन रोमाञ्चित हो उठे, उनके हाथ जुड़ गए, सिर झुक गया, मानों सच्चिदानन्द स्वरुप अर्जुन को दिख रहा है। उनके भीतर अष्ट सात्त्विक भाव उदित होने लगे।

11.14

ततः(स्) स विस्मयाविष्टो, हृष्टरोमा धनञ्जयः।
प्रणम्य शिरसा देवं(ङ्), कृताञ्जलिरभाषत॥11.14॥

भगवान् के विश्वरूप को देखकर वे अर्जुन बहुत चकित हुए (और) आश्चर्य के कारण उनका शरीर रोमांचित हो गया। (वे) हाथ जोड़कर विश्वरूप देव को मस्तकसे प्रणाम करके बोले।

विवेचन - सञ्जय अर्जुन की स्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं कि श्रीभगवान् के दिव्य रूप के दर्शन कर अर्जुन अत्यन्त आश्चर्यचकित हैं, उनका रोम-रोम हर्षित है, वे श्रीभगवान् के सामने नत मस्तक हैं और कर बद्ध हो उन्हें प्रणाम कर रहे हैं। ज्ञान के धन से अर्जुन धनञ्जय हो रहे हैं।

अर्जुन के मन-मस्तिष्क में अपने सद्‌गुरु के प्रति कृतज्ञता की परम लौ जागृत हो रही है। हरि की कैसी अलौकिक कृपा है कि शिष्य के अनुरोध पर वे अपने दिव्य रूप के दर्शन से उसे अभिभूत कर देते हैं!

सुख की आन्तरिक तरङ्गों में ओत-प्रोत, नेत्रों से आँसुओं का अविरल प्रवाह, वे भाव विभोर श्रीभगवान् के समक्ष शीश झुका प्रार्थना करने लगे।

11.15

अर्जुन उवाच
पश्यामि देवांस्तव देव देहे,
सर्वांस्तथा भूतविशेषसङ्घान्।
ब्रह्माणमीशं(ङ्) कमलासनस्थम्,
ऋषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान्॥11.15॥

अर्जुन बोले - हे देव! (मैं) आपके शरीर में सम्पूर्ण देवताओं को तथा प्राणियोंके विशेष-विशेष समुदायोंको और कमलासनपर बैठे हुए ब्रह्माजीको, शङ्करजीको, सम्पूर्ण ऋषियोंको और दिव्य सर्पोंको देख रहा हूँ।

विवेचन- अर्जुन की मनोदशा का यहाँ अति सुन्दर चित्रण है। श्रीभगवान् के विराट रूप के दर्शन कर अर्जुन विस्मित हैं और उनके मुख से अस्फुट वाणी में शब्द स्वतः ही प्रकट हो रहे हैं। अर्जुन जो देख रहे हैं, वे अब बोल रहे हैं।

अर्जुन को द्वैत और अद्वैत दोनों रूप में स्वयं के दर्शन हो रहे हैं। वे श्रीभगवान् के विराट रूप में भी समाहित हैं और उनसे विभक्त/पृथक, उनके समक्ष खड़े होकर उनके दर्शन भी कर पा रहे हैं। सगुण और निर्गुण, निराकार सर्वव्यापी परमात्मा, दोनों रूपों का दर्शन कर अर्जुन स्तम्भित हो गए।

ज्ञानेश्वरजी महाराज कहते हैं-

तैसाचि तया सुखानुभवापाठीं, केला द्वैताचा सांभाळु दिठी,
मग उसासौनि किरीटी,क्षवास पाहिली ॥ २५३ ॥

श्रीभगवान् अपने भक्तों के साथ द्वैत और अद्वैत दोनों प्रकार के सम्बन्ध रखते हैं ताकि सृष्टि के कार्य भी सुचारु रूप से चलते रहें।

मृत्युलोक में बैठकर अर्जुन को श्रीभगवान् के विराट रूप में ब्रह्मलोक, देवलोक, बैकुण्ठ, कैलाश, नागलोक एवं तीनों लोक के दर्शन हो रहे हैं - पाताल, भूलोक, स्वर्ग और उससे भी परे सम्पूर्ण सृष्टि। पञ्च महाभूतों से निर्मित भूलोक के विशेष समुदाय, साथ-साथ कमल के आसान पर स्थित ब्रह्मदेव या स्वर्गलोक, भूलोक में प्रज्ञावान ऋषियों को और दिव्य सर्पों के समूह, सभी को अर्जुन देख पा रहे हैं।

ज्ञानेश्वरजी महाराज अप्रतिम उपमा देते हुए कहते हैं -

अहो आकाशचिये खोळे, दिसती ग्रहणांचीं कुळें,
कां महावृक्षीं अविसाळें पक्षीजातीचीं ॥ २५८ ॥

अर्थात् एक बड़े वृक्ष में घोसलों के समान, विराट रूप में इस प्रकार के छोटे समूह देख रहा हूँ।

"तयापरी श्रीहरी, तुझिया विश्वात्मकीं इये शरीरीं,
स्वर्गु देखतसें अवधारीं, सुरगणेंसीं ॥ २५९ ॥"

"पैं कश्यपादि ऋषिकुळें, इयें तुझिया स्वरूपीं सकळें,
देखतसें पाताळें, पन्नगेंशीं ॥ २६३ ॥"

अर्थात् जहाँ-जहाँ मेरी दृष्टि जा रही है, सम्पूर्ण सृष्टि का दर्शन हो रहा है, पाताल भी देख रहा हूँ, कश्यप ऋषि जो आद्य ऋषि हैं उनके दर्शन भी हो गए।

जिस दृश्य का वर्णन सञ्जय भी न कर पाये, अर्जुन कर रहे हैं।

11.16

अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रं(म्),
पश्यामि त्वां(म्) सर्वतोऽनन्तरूपम्।
नान्तं(न्) न मध्यं(न्) न पुनस्तवादिं(म्),
पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप॥11.16॥

हे विश्वरूप! हे विश्वेश्वर! आपको (मैं) अनेक हाथों, पेटों, मुखों और नेत्रों वाला (तथा) सब ओरसे अनन्त रूपोंवाला देख रहा हूँ। (मैं) आपके न आदिको, न मध्यको और न अन्तको ही देख रहा हूँ।

विवेचन- अर्जुन कहते हैं- हे सम्पूर्ण विश्व के स्वामी! हे अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड नायक! समस्त विश्व की बागडोर जिनके हाथ में है, विश्व के नियन्ता, विश्वेश्वर, ऐसे अनेक स्तुति वचनों से श्रीभगवान् को सम्बोधित करते हैं।

अनेक बाहु, उदर, मुख, नेत्र जो अनगिनत हैं, आपका आदि, मध्य, अन्त भी नहीं बूझ पा रहा हूँ। कहाँ से प्रारम्भ हुआ, कहाँ अन्त हुआ, नहीं देख पा रहा हूँ। चहुँ ओर आपकी अनन्तता का ही विस्तार है। अर्जुन निराकार रूप का वर्णन करते हुए कहते हैं कि क्या एक भी ऐसा अणु-परमाणु है जिसमें आप विद्यमान नहीं? अर्जुन दिव्य दृष्टि से सूक्ष्म अणु-परमाणु देख पा रहे हैं।

हमारी दृष्टि भी कई प्रकार की होती है -

चर्म दृष्टि से संसार सच्चा लगता है, हम इसके विभिन्न पात्रों में अपनी पहचान पाते हैं।

विवेक/ विज्ञान दृष्टि से संसार स्थिर नहीं, परिवर्तनशील लगता है। नाते-रिश्तों में परिवर्तन आता है, शरीर बदल जाता है, दृष्टिकोण भी परिवर्तित हो जाता है।

भाव / भगवद् दृष्टि- यह दृष्टि सब में एक समान नहीं और इसी कारण हम एक दूसरे के प्रति पृथक भाव रखते हैं। मेरी माँ, मेरी पुत्री, इत्यादि सम्बन्धों को समझने का भाव भिन्न हो जाता है।

दिव्य दृष्टि- इन सबको समाहित किये हुए है। इसके द्वारा हमें ज्ञान प्राप्त होता है कि किस प्रकार परमात्मा के साथ संसार एकाकार है, वह दिव्य दृष्टि है।

ज्ञानेश्वरजी महाराज कहते हैं-

इस दिव्य दृष्टि के कारण ही ज्ञात होता है कि अणु-परमाणु में भी वह चैतन्य है।

हें तुजवीण एकादियाकडे, परमाणूहि एतुला कोडें,
अवकाशु पाहतसें परि न सांपडे ऐसें व्यापिले तुवां || २७२ ||

अर्थात् मैं देखना चाह रहा था आपके बिना एक-आधा परमाणु भी है क्या? पर ऐसा कुछ भी नहीं। आपने सब व्याप्त कर लिया। मैं देखना चाहता था कि आप बैठे हो कि खड़े हो? आपके ऊँचाई कितनी है? पर वह भी मैं नहीं देख पा रहा।

तूं उभा ना बैठा, दिघडु ना खुजटा,
तुज तळीं वरी वैकुंठा, तूंचि आहासी || २७७ ||

"परि या तुझिया रूपाआंतु, जी उणीव एक असे देखतु,
जे आदि मध्य अंतु, तिन्हीं नाहीं ॥ २८० ॥"

ज्ञानेश्वरजी महाराज के चिन्तन के बिना इस अध्याय का अर्थ नहीं समझा जा सकता। ज्ञानेश्वरी का नाम ज्ञानेश्वर जी महाराज ने भावार्थ दीपिका रखा था क्योंकि यह भाव जागृत करने वाला दीपक है। ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं कि आपके विश्वरूप में एक कमी है, इसमें आदि, मध्य और अन्त तीनों का ही अभाव है।

भक्त और परमात्मा के सम्बन्ध का भाव, भाव दृष्टि से विहीन हो कर कैसे जाना जा सकता है?

श्रीभगवान् स्वयं कहते हैं - ईश्वर को भाव से जाना, माना और पहचाना जा सकता है।

परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम्।।9.11।।

ज्ञानेश्वरजी महाराज कहते हैं, भाव से ही उन्हें आलिङ्गन में लिया जा सकता है।

11.17

किरीटिनं(ङ्) गदिनं(ञ्) चक्रिणं(ञ्) च,
तेजोराशिं(म्) सर्वतो दीप्तिमन्तम्।
पश्यामि त्वां(न्) दुर्निरीक्ष्यं(म्) समन्ताद्-
दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम् ॥11.17॥

(मैं) आपको किरीट (मुकुट), गदा, चक्र (तथा शंख और पद्म) धारण किये हुए हुए देख रहा हूँ। (आपको) तेज की राशि, सब ओर प्रकाशवाले, देदीप्यमान अग्नि तथा सूर्य के समान कान्तिवाले, नेत्रोंके द्वारा कठिनतासे देखे जानेयोग्य और सब तरफसे अप्रमेय स्वरूप (देख रहा हूँ)।

विवेचन- अर्जुन श्रीभगवान् के सगुण रूप का वर्णन करते हुए कहते हैं, मैं देख पा रहा हूँ कि आपने किरीट/मुकुट धारण किया हुआ है, आपके हाथों में गदा, चक्र, पद्म, सुशोभित हैं, आप दिव्य प्रकाश के अम्बार हो। ऐसा तेज जिसे देखना भी कठिन है तो उसका वर्णन कैसे किया जाये? आपका तेज सूर्य की अग्नि के समान है- यह अप्रमेय है। मैं इसे सिद्ध नहीं कर सकता। वही चक्र लेकर जो आप भीष्म की ओर दौड़े, वही गदा जो भीम को प्रदान की, वही सुदर्शन चक्र और गदा भी देख रहा हूँ। वही मुकुट जिसे पहन आप मेरे सारथी बने, पर इस मुकुट की आभा अब देदीप्यमान है।

ज्ञानेश्वरजी महाराज इसकी व्याख्या करते हुए कहते हैं -

नोहे तोचि हा शिरीं?, मुकुट लेइलासि श्रीहरि,
परि आतांचें तेज आणि थोरि, नवल कीं बहु हें || २९४ ||

एवं आदिमध्यान्त रहिता, तूं विश्वेश्वरा अपरिमिता,
देखलासि जी तत्त्वतां, विश्वरूपा || २८२ ||

ऐसा पवाडु मांडुनि विश्वाचा, तूं कवण पां एथ कोणाचा,
हें पाहिलें तंव आमुचा, सारथि तोचि तूं || २८८ ||

11.18

त्वमक्षरं(म्) परमं(म्) वेदितव्यं(न्),
त्वमस्य विश्वस्य परं(न्) निधानम्।
त्वमव्ययः(श्) शाश्वतधर्मगोप्ता,
सनातनस्त्वं(म्) पुरुषो मतो मे॥11.18॥

आप (ही) जाननेयोग्य परम अक्षर (अक्षरब्रह्म) हैं, आप (ही) इस सम्पूर्ण विश्वके परम आश्रय हैं, आप (ही) सनातनधर्म के रक्षक हैं (और) आप (ही) अविनाशी सनातन पुरुष हैं - (ऐसा) मैं मानता हूँ।

विवेचन - अर्जुन कहते हैं, आप ही जानने योग्य हो। इस संसार में आकर इस जीव की कृतार्थता आपको जानने से ही होगी। संसार में अनगिनत विषयों पर ज्ञान के भण्डार उपलब्ध हैं - गूगल, वाहट्सएप्प, सोशल मिडिया पर अपार चर्चा रहती है, पर जिसे जानना चाहिए, वे केवल आप ही हो। मानव जीवन का एकमात्र और अन्तिम गन्तव्य आपको प्राप्त करना ही है। समस्त संसार की रचना ही इस उद्देश्य से की गयी है। आप परम अक्षर हो, जो क्षीण नहीं होता, आप सर्वोपरि हो।

वेदितव्यं - इस संसार में जानने योग्य।

परं निधानम् - सम्पूर्ण विश्व का निधान, सम्पत्ति कोष हो। साथ ही साथ आश्रय स्थान भी हो, सम्पूर्ण विश्व को आश्रय देने वाले हो।

त्वमव्ययः - जिसका व्यय, परिवर्तन नहीं होता, अविनाशी।

शाश्वत - सनातन, बाकि सब संसार अशाश्वत है।

धर्मगोप्ता - धर्म का संरक्षण करने वाले। परम पूज्य स्वामीजी कहते हैं - धर्म का मैंने पालन किया इसका पुरस्कार कौन देगा? मैंने अपने धर्मों का पालन किया, यह आप देखते हो अतः सबका पालन करने वाले आप धर्मगोप्ता हो। सब नियम आपके द्वारा बनाये गए हैं और इसी कारण नियम पालना करने पर पुरस्कार भी आप ही देते हो। आप ही पुरुषोत्तम हो।

11.19

अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्यम्,
अनन्तबाहुं(म्) शशिसूर्यनेत्रम्।

पश्यामि त्वां(न्) दीप्तहुताशवक्त्रं(म्),
स्वतेजसा विश्वमिदं(न्) तपन्तम्॥11.19॥

आपको (मैं) आदि, मध्य और अन्त से रहित, अनन्त प्रभावशाली, अनन्त भुजाओंवाले, चन्द्र और सूर्य रूप नेत्रोंवाले, प्रज्वलित अग्नि रूप मुखोंवाले (और) अपने तेजसे संसारको तपाते करते हुए देख रहा हूँ।

विवेचन - अर्जुन के द्वारा श्रीभगवान् का वर्णन शब्दातीत है, शब्दों में वर्णन नहीं किया जा सकता, इसी कारण शब्दों की पुनरावृत्ति हो रही है। श्रीभगवान् के प्रति उनकी अपार श्रद्धा एवं भक्ति केवल भावों से व्यक्त की जा सकती है, ऐसा वर्णन शब्दों में बद्ध नहीं हो सकता।

अपार वीरता के स्वामी, अनन्त बाहु वाले, आपके नेत्र सूर्य और चन्द्र की भाँति हैं, आपके मुख पर अग्नि का तेज प्रज्वलित दिखता है, अपने इस तेज से आप सम्पूर्ण विश्व को आलोकित कर रहे हैं।

आपके चरण सम्पूर्ण विश्व के चरण हैं, अनन्त बाहु, मानों समस्त विश्व के बाहु आप ही हो।

शशिसूर्यनेत्रम् - आपके दो प्रकार के नेत्र, एक अनुग्रह करने वाली शीतल आँख और एक कोप करने वाली। कोप दृष्टि और कृपा दृष्टि, शीतलता और उष्णता दोनों आप में हैं। आपका उग्र रूप शासन के योग्य हैं और शीतल रूप पालनहार है।

ज्ञानेश्वरजी महाराज इसकी व्याख्या करते हुए कहते हैं -

पै चंद्र चंडांशु डोळां,
दावितासि कोप्रसाद लीळा,
एकां रुससि तमाचिया डोळां,
एकां पाळीतोसि कृपादृष्टि || ३११ ||

11.20

द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं(म्) हि,
व्याप्तं(न्) त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः।
दृष्ट्वाद्भुतं(म्) रूपमुग्रं(न्) तवेदं(म्),
लोकत्रयं(म्) प्रव्यथितं(म्) महात्मन्॥11.20॥

हे महात्मन्! यह स्वर्ग और पृथ्वीके बीचका अन्तराल और सम्पूर्ण दिशाएँ एक आपसे ही परिपूर्ण हैं। आपके इस अद्भुत (और) उग्ररूपको देखकर तीनों लोक व्यथित (व्याकुल) हो रहे हैं।

विवेचन- अर्जुन कहते हैं, हे महात्मन, स्वर्ग और पृथ्वी के बीच का अन्तर, चहुँ दिशाओं को आपने ही व्याप्त किया है, स्वर्ग लोक से पाताल लोक तक के स्वामी आप ही हैं।

आपका अलौकिक, दिव्य, उग्र रूप देखकर कुछ लोग व्यथित हो जाते हैं। जो ईश्वर की पूजा-अर्चना नहीं करते या अनैतिक कार्य करते हैं, ऐसे लोग ही श्रीभगवान् से डरते हैं। प्रह्लाद के पिता हिरण्यकश्यप के लिए आप नरसिंह के उग्र रूप में खम्भे से प्रकट हुए।

.

11.21

अमी हि त्वां(म्) सुरसङ्घा विशन्ति,
केचिद्भीताः(फ्) प्राञ्जलयो गृणन्ति।
स्वस्तीत्युक्त्वा महर्षिसिद्धसङ्घाः(स्),
स्तुवन्ति त्वां(म्) स्तुतिभिः(फ्) पुष्कलाभिः॥11.21॥

वे ही देवताओं के समुदाय आपमें प्रविष्ट हो रहे हैं। (उनमेंसे) कई तो भयभीत होकर हाथ जोड़े हुए (आपके नामों और गुणोंका) कीर्तन कर रहे हैं। महर्षियों और सिद्धोंके समुदाय 'कल्याण हो! मंगल हो!' ऐसा कहकर उत्तम-उत्तम स्तोत्रोंके द्वारा आपकी स्तुति कर रहे हैं

विवेचन- अर्जुन श्रीभगवान् से कहते हैं कि आपके इस स्वरूप में, मैं देवता गण देख रहा हूँ। सब देवता युद्ध के समराङ्गण में योद्धा रूप में प्रकट हैं और कुछ आपकी पूजा कर रहे हैं।

सुनामी, कोरोना महामारी, भूकम्प इत्यादि आपदाओं में हमें सृष्टि के उग्र रूप के दर्शन होते हैं। जब मनुष्य प्रकृति को विकृत करता है तो प्रकृति रौद्र रूप धारण कर सब कुछ विध्वंस कर देती है। ऐसी विषम परिस्थितियों में पुनः सृष्टि का कल्याणकारी रूप उजागर करने हेतु महर्षि स्वस्ति मन्त्रों के उच्चारण द्वारा शान्तिमय वातावरण का निर्माण करते हैं।

श्रीभगवान् अपने मनोहारी रूप के दर्शन पश्चात् जब रौद्र रूप में प्रकट होते हैं तो उनके इस उद्देश्य में भी हमारा हित निहित है। वे हमें अपनी सुखद अनुभूति की परिधि (कम्फर्ट ज़ोन) से बाहर निकालने के प्रयोजन से ऐसा स्वाङ्ग रचते हैं। वे हमें इस तथ्य का बोध करवाते हैं कि केवल अनुकूलता ही श्रीभगवान् का स्वरुप नहीं अपितु प्रतिकूलता भी उनका ही अंश है।

विनोबा भावे जी कहते हैं कि बुराई से घृणा नहीं करनी चाहिए, भयावह से डरना या भागना नहीं अपितु उसे भी ग्रहण करते हुए हम अपने जीवन कितना सुरक्षित कर पाते हैं, यह अध्याय हमें उसका ज्ञान प्रदान कर रहा है।

जिस प्रकार सिंह-सिंहनी से सब जीव-जन्तु भयभीत रहते हैं, पर उनके बच्चे नहीं, उसी प्रकार श्रीभगवान् के रौद्र रूप से हिरणकश्यप डरा, परन्तु प्रह्लाद नहीं।

11.22

रुद्रादित्या वसवो ये च साध्या-
विश्वेऽश्विनौ मरुतश्चोष्मपाश्च।
गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसङ्घा,
वीक्षन्ते त्वां (म्) विस्मिताश्चैव सर्वे॥11.22॥

जो ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, आठ वसु, बारह साध्यगण, दस विश्वेदेव और दो अश्विनीकुमार, उनचास मरुद्गण और गरम गरम भोजन करनेवाले (सात पितृगण) तथा गन्धर्व, यक्ष, असुर और सिद्धोंके समुदाय हैं, (वे) सभी चकित होकर आपको देख रहे हैं।

विवेचन- अर्जुन को ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, आठ वसु, बारह साध्य गण, दस विश्वेदेव, दो अश्विनकुमार, उनचास मारुत, पितृगण, गन्धर्व, यक्ष, असुर और सिद्धों के समुदाय सभी आश्चर्य चकित हो श्रीभगवान् के विश्वरूप को ही निहार रहे हैं। कश्यप मुनि की दो पत्नियों काष्ठ और अरिष्ठा के पुत्र गन्धर्व कहलाते हैं। वे कलाओं से युक्त हैं और स्वर्गलोक के गायक हैं।

11.23

रूपं (म्) महत्ते बहुवक्त्रनेत्रं(म्),
महाबाहो बहुबाहूरुपादम्।
बहूदरं(म्) बहुदंष्ट्राकरालं(न्),
दृष्ट्वा लोकाः(फ्) प्रव्यथितास्तथाहम्॥11.23॥

हे महाबाहो! आपके बहुत मुखों और नेत्रोंवाले, बहुत भुजाओं, जंघाओं और चरणोंवाले, बहुत उदरोंवाले (और) बहुत विकराल दाढ़ोंवाले महान् रूपको देखकर सब प्राणी व्यथित हो रहे हैं तथा मैं भी (व्यथित हो रहा हूँ)।

विवेचन- अर्जुन श्रीभगवान के विकराल और विराट रूप से भयभीत हो व्यथित हो रहे हैं। मानव हृदय के जैसे भाव रहते हैं उसका दृष्टिकोण भी वैसा ही बन जाता है, अतः अर्जुन को प्रतीत हो रहा है कि समस्त प्राणी श्रीभगवान् के इस उग्र रूप को देख भयग्रस्त हैं।

हम समस्त संसार के भाव को अपने दृष्टिकोण से मिलाते हैं। जब हम आनन्द में होते हैं तो सब जग आनन्दित विदित होता है और जब हम शान्त होते हैं तो सब जग शान्त अवगत होता है।

11.24

नभःस्पृशं(न्) दीप्तमनेकवर्णं(म्),
व्यात्ताननं(न्) दीप्तविशालनेत्रम्।
दृष्ट्वा हि त्वां(म्) प्रव्यथितान्तरात्मा,
धृतिं(न्) न विन्दामि शमं(ञ्) च विष्णो॥11.24॥

क्योंकि हे विष्णो! (आपके) देदीप्यमान अनेक वर्ण हैं, आप आकाशको स्पर्श कर रहे हैं अर्थात् सब तरफसे बहुत बड़े हैं, आपका मुख फैला हुआ है, आपके नेत्र प्रदीप्त और विशाल हैं। (ऐसे) आपको देखकर भयभीत अन्तःकरणवाला (मैं) धैर्य और शान्ति को प्राप्त नहीं हो रहा हूँ।

विवेचन- अर्जुन श्रीभगवान् का मनमोहक चित्रण करते हुए कहते हैं, मानो आपकी ऊँचाई नभ तक है और अपार तेज झलका रही है, आपका मुख विस्तृत है और आपके नेत्र प्रदीप्त और विशाल हैं।

ईश्वर के इस रूप की परिकल्पना भी अर्जुन ने कभी नहीं की थी, अतः अब उसकी विशालता और विकरालता से उनका अन्तर्मन अधीर हो रहा है। उनका मन अशान्त होने लगा, उन्हें श्रीभगवान सङ्ग अपने गुरु-शिष्य सम्बन्ध, साख्य भक्ति भाव पर भी सन्देह होने लगा। उन्हें विश्वास ही नहीं हो रहा था कि ईश्वर के जिस रूप से वे परिचित हैं और जो उन्हें अब दिख रहा है, वह उनके प्रभु का ही रूप है।

नभः स्पृशं दीप्तम् - भारतीय वायु सेना का बोध वाक्य भी है, जिसका भावार्थ है, गर्व से आकाश को छूना। कई भारतीय संस्थानों के आदर्श वाक्य श्रीमद्भगवद्गीता से उद्धृत हैं।

योगक्षेमं वहाम्यहं - भारतीय जीवन बीमा निगम का ध्येय वाक्य बन गया।

योग: कर्मसु कौशलम् - VNIT प्रशिक्षण संस्था का आदर्श वाक्य है।

11.25

दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि,
दृष्ट्वैव कालानलसन्निभानि।
दिशो न जाने न लभे च शर्म,
प्रसीद देवेश जगन्निवास॥11.25॥

आपके प्रलयकालकी अग्निके समान प्रज्वलित और दाढ़ोंके कारण विकराल (भयानक) मुखोंको देखकर (मुझे) न तो दिशाओंका ज्ञान हो रहा है और न शान्ति ही मिल रही है। (इसलिये) हे देवेश! हे जगन्निवास! (आप) प्रसन्न होइये।

विवेचन- अर्जुन अब श्रीभगवान् से करबद्ध हो विनती करते हैं कि आप प्रसन्न होकर मुझे अपना मनोहारी रूप पुनः दिखाइए जिसमें आपके हाथों में बाँसुरी है, मोर के पङ्ख से आपका ललाट सुशोभित है। आपके इस भयावह स्वरूप के दर्शन कर मेरा चित्त अशान्त और दिशाहीन हो उठा है।

हम सब भी सृष्टि के भयानक, उग्र रूप से विचलित हो उठते हैं। कोरोना की महामारी ने सभी को भयभीत कर दिया था। पिछले सप्ताह महाराष्ट्र में निराधार सूचना के कारण एक भयानक रेल त्रासदी घटित हुई और कई निर्दोष प्राणियों की अकाल मृत्यु का कारण बनी।

11.26, 11.27

अमी च त्वां(न्) धृतराष्ट्रस्य पुत्राः(स्),
सर्वे सहैवावनिपालसङ्घैः।
भीष्मो द्रोणः(स्) सूतपुत्रस्तथासौ,
सहास्मदीयैरपि योधमुख्यैः॥11.26॥
वक्त्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति,
दंष्ट्राकरालानि भयानकानि।
केचिद्विलग्ना दशनान्तरेषु,
सन्दृश्यन्ते चूर्णितैरुत्तमाङ्गैः॥11.27॥

हमारे पक्षके मुख्य-मुख्य योद्धाओंके सहित भीष्म, द्रोण और वह कर्ण भी आपमें (प्रविष्ट हो रहे हैं)। राजाओंके समुदायोंके सहित धृतराष्ट्रके वे ही सब के सब पुत्र,
आपके विकराल दाढ़ोंके कारण भयंकर मुखोंमें बड़ी तेजीसे प्रविष्ट हो रहे हैं। (उनमें से) कई एक तो चूर्ण हुए सिरों सहित (आपके) दाँतोंके बीचमें फँसे हुए दीख रहे हैं।

विवेचन- वर्तमान दृश्य का वर्णन करते हुए अर्जुन कहते हैं कि अब उन्हें प्रभु के विशाल मुख में धृतराष्ट्र के सभी पुत्र अति वेग से अन्दर जाते हुए दिख रहे हैं। साथ में पृथ्वी लोक के राजा, द्रोणाचार्य, भीष्म पितामह, सूत पुत्र कर्ण, पाण्डवों की सेना के सैनिक सभी उनके मुख में प्रवेश कर रहे हैं।

श्रीभगवान् अपने विकराल दाँतों से उनको मसल कर चूर्ण कर रहे हैं। आप उन वीर योद्धाओं का भक्षण कर रहे हैं और उनके शेष-अवशेष आपके दाँतों में अटके हुए दिख रहे हैं। अर्जुन काल की गति से परे भविष्य में घटने वाले दृश्यों का भी यहाँ व्याख्यान करने लगे। अर्जुन को अब श्रीभगवान् के साथ अपने प्रेम भक्ति से परिपूर्ण प्रत्येक सम्बन्ध पर संशय हो रहा है। श्रीभगवान् उनके सखा, सारथी, कृष्ण भगवान के रूप में उनको हर्षोल्लासित करते थे, परन्तु अब जिस विराट, विकराल स्वरूप का दर्शन उन्हें हो रहा है, वह उनके मन और हृदय को पीड़ित कर रहा है।

ज्ञानेश्वरजी महाराज ने इस दृष्टान्त की अति सुन्दर व्याख्या करते हुए कहा-

तूं भ्रमलेपणें अहंकृती, यांसी घातु न करिसी चितीं।
तरी सांगे कायि हे होती, चिरंतन ॥ ९८ ॥

"जे मी मारिता हे कौरव मरते, ऐसेनि वेंटाळिला होता मोहें बहुतें,तो फेडावयालागीं अनंतें, हें दाखविलें निज ॥ ४०७ ॥

अर्थात् श्रीभगवान् ने अर्जुन का अहङ्कार नष्ट करने के प्रयोजन से उन्हें यह दृश्य दिखाया। अर्जुन समझ रहे थे कि वे वीर योद्धा हैं और उनके द्वारा कौरवों की सेना का विनाश होगा। श्रीभगवान् उन्हें यह बोध करवाना चाहते थे कि धर्मस्थापना के इस युद्ध के नियन्ता वे नहीं हैं। अगर अर्जुन कौरव सेना का वध नहीं करेंगे तो क्या वे सदैव चिरंजीवी रहेंगे, कभी तो देह छोड़ेंगे? अर्जुन को अहङ्कार होने लगा था कि वे वीर योद्धा, धनुर्धारी, नरोत्तम है, मैं मारने वाला हूँ। श्रीभगवान् उन्हें चेत करवाना चाहते थे कि यदि वे इस कार्य को नहीं करेंगे तो वे किसी और से इसे करवा लेंगे। धर्म संस्थापना के लिए वे किसी और को नियुक्त कर देंगे। यह अर्जुन का सद्भाग्य है कि श्रीभगवान् ने उन्हें निमित्त चुना। अर्जुन के मोह को नष्ट करने के लिए ही ऐसे उग्र रूप का दर्शन श्रीभगवान् ने करवाया।

इसके साथ आज का विवेचन सत्र समाप्त हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
Let’s come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/